1983(12) eILR(PAT) SC 1



## पंजाब राज्य और अन्य

बनाम

## जगदेव सिंह तलवंडी

## (State of Punjab and Others *V.* Jagdev Singh Talwandi)

(16 दिसम्बर, 1983)

(मुख्य न्यायमूर्ति वाई० वी० चन्द्रचूड़, न्यायमूर्ति पी० एन० भगवती, अमरेन्द्र नाथ सेन, डी० पी० मदान और एम० पी० ठक्कर)

संविधान, 1950—अनुच्छेद 22(5)—निवारक निरोध—सदोष कार्यवाही के ब्यौरे जैसे कि समय, स्थान, तारीख निवारक निरोध के आधारों में दिये जाना किन्तु उसके साथ संलग्न विशिष्टियों में उन्हें न दोहराया जाना—विधि की दृष्टि से यह अनुचित नहीं है।

संविधान, 1950—अनुच्छेद 22(5)—(सपठित राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, 1980 की धारा 3)—निवारक निरोध—आदेश पारित करने वाले प्राधिकारी का निरुद्ध करने संबंधी कर्तव्य—यह आवश्यक है कि संविधान के उपबंधों का यथार्थ रूप से पालन किया जाए।

संविधान, 1950—अनुच्छेद 22(5)—निवारक निरोध—यह आवश्यक नहीं है कि निरुद्ध व्यक्ति को उसके विरुद्ध एकत्रित साक्ष्य के स्रोत प्रस्तुत किए जाएं।

संविधान, 1950—अनुच्छेद 22(5) तथा 226—निवारक निरोध संबंधी प्रक्रिया—निरोध प्राधिकारी द्वारा प्रतिशपथपत्र फाइल किया जाना उचित है।

संविधान, 1950—अनुच्छेद 136 तथा 226 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 354 तथा सिविल प्रक्रिया

1983(12) eILR(PAT) SC 1



**संहिता, 1908 की धारा 33 और 107]—प्रणाली एवं प्रक्रिया—सकारण निर्णय के बिना अंतिम आदेश प्रख्यापित किए जाने की नीति अभिखंडनीय है ।**

यह अपील 1983 की दांडिक रिट याचिका सं० 516 में पंजाब हरियाणा उच्च न्यायालय के एकल न्यायमूर्ति के तारीख 29 नवम्बर, 983 वाले निर्णय के विरुद्ध विशेष इजाजत लेकर की गई है। यह रिट याचिका प्रत्यर्थी द्वारा फाइल की गई थी और उसने मजिस्ट्रेट द्वारा पारित निरोध आदेश पर आक्षेप किया था क्योंकि मजिस्ट्रेट ने प्रत्यर्थी को राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, 1980 की धारा 3(2) के साथ पठित धारा 3(3) के अधीन निरुद्ध किया था। प्रत्यर्थी को उक्त निरोध आदेश के विरुद्ध गिरफ्तार कर लिया गया और कारागार में डाल दिया गया और दूसरे कारागार में भेज दिया गया। प्रत्यर्थी ने उच्च न्यायालय में इस बारे में आक्षेप किया कि उसे क्यों एक कारागार से दूसरे कारागार से अन्तरित किया गया है। इस पर सरकार ने उसे आश्वासन दिया कि ऐसा नहीं किया जाएगा। जिस पर कि प्रत्यर्थी ने अपनी रिट याचिका वापस ले ली। प्रत्यर्थी पर निरोध आदेश की तामील इस आधार पर की गई थी कि उसने दो ऐसे भाषण दिए थे जो जनता को भड़काने वाले थे और जिनमें वस्तुस्थिति को तोड़-मरोड़कर और बढ़ा-चढ़ा कर बतलाया गया था। तत्पश्चात् मामला उच्चतम न्यायालय में प्रस्तुत हुआ। यह विशेष इजाजत द्वारा अपील के रूप में था। अपील मंजूर करते हुए,

**अभिनिर्धारित**—न्यायाधीश की बाबत, उनके निर्णयानुसार जो त्रुटि हुई है, वह इस सुगमता, अपरीक्षित उपधारणा के कारण हुई है, जो कि उन्होंने मामले के महत्वपूर्ण पहलू पर अपनाई है। इसका कारण यह है कि जो सी० आई० डी० की रिपोर्ट निरोध के आधारों सहित उसे प्रदत्त की गई थी, उसमें यह अभिव्यक्त अनुबंध मौजूद था कि वह "निरोध के कारणों का आधार" गठित करती थी। इन आधारों में प्रत्येक ब्यौरे का उल्लेख किया गया है जिसका उल्लेख किया जाना आवश्यक हीं था। सी० आई० डी० की रिपोर्ट निरुद्ध व्यक्ति को इस रूप में प्रस्तुत की गई थी मानों कि वह उस जानकारी का स्रोत गठित करती

थीं जो इस निष्कर्ष की ओर ले जाता था कि उसने भाषण दिया था जिससे कि लोक व्यवस्था के हितों में उसका निरोध आवश्यक हो गया था। इन परिस्थितियों में, निरुद्ध व्यक्ति को जो आधार तथा सामग्री प्रस्तुत की गई थी, उनका परिशीलन एक साथ किया जाना है मानो कि सी० आई० डी० की रिपोर्ट के रूप में सामग्री निरोध के आधारों को अग्रसर करती थी। (पैरा 8)

यह असंभव प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय के इस दृष्टिकोण को स्वीकार कर लिया जाए कि निरोध के प्रथम आधार की पर्याप्त विशिष्टियां निरुद्ध व्यक्ति को प्रस्तुत नहीं की गई थीं जिनके आधार पर कि वह निरुद्ध करने वाले प्राधिकारी के समक्ष प्रभावी अभ्यावेदन कर सकता। (पैरा 16)

इस प्रकृति के विषय में निरोध प्राधिकारी ने अपने कार्य के संबंध में किंचित प्रायिक और कल्पनारहित दृष्टिकोण अपनाया। सी० आई० डी० की मूल रिपोर्ट में उस बैठक से संबद्ध लगभग सभी तात्विक ब्यौरे शामिल हैं जिनका उल्लेख आधारों में किया गया है। निरोध प्राधिकारी ने अनावश्यक रूप से दत्त सामग्री प्रस्तुत करते समय उसमें से कुछ कटौतियां कर लीं और दत्त सामग्री में जो तारीख, स्थान समय और अवसर सम्मेलन के बारे में वर्णित किया गया था, उसका उल्लेख नहीं किया। निरोध प्राधिकारी की ओर से सूझबूझ के इस अभाव के परिणामस्वरूप प्रत्यर्थी को दलील का आभास मात्र पेश किया गया। इस न्यायालय ने अनेक मामलों में यह मत व्यक्त किया है कि जब कि निरोध संबंधी कोई आदेश पारित किया जाए तो निरोध प्राधिकारियों द्वारा अपने कार्य में समुचित सावधानी बरतनी चाहिए। निवारक निरोध एक आवश्यक दोष है, किन्तु यह निश्चित रूप से, आवश्यक है। अतः दैहिक स्वाधीनता का प्रवंचन, यदि वह कदाचित किया जाता है, तो वह संविधान के यथार्थ निबंधनों के आधार पर किया जाना होगा। इससे न्यूनतर कोई दृष्टिकोण चलने योग्य नहीं है। (पैरा 17)

यह कोई मान्य विधि नहीं है कि निरुद्ध व्यक्तियों के विरुद्ध निरोध प्राधिकारी द्वारा संकलित साक्ष्य निश्चित रूप से ही उसे प्रदत्त किया जाना चाहिए। (पैरा 19)

1983(12) eILR(PAT) SC 1



इन मामलों से यह दर्शित होता है कि निरुद्ध व्यक्ति न तो उसके विरुद्ध प्राप्त जानकारी के स्रोत के बारे में अवगत कराए जाने का हकदार है और न ही उस साक्ष्य से अवगत कराए जाने का जो कि उसके विरुद्ध संगृहीत की गयी हो, जैसे कि उदाहरणार्थ संपुष्टि करने वाला ऐसा साक्ष्य कि सी० आई० डी० की रिपोर्ट सत्य तथा सही थी। उसका अधिकार यह है कि वह प्रत्येक ऐसी तात्विक विशिष्टि को प्राप्त करे जिसके बिना पूर्ण तथा प्रभावी अभ्यावेदन विरचित नहीं किया जा सकता। यदि निरोध आदेश किसी दस्तावेज, कथन या अन्य सामग्री के प्रति निर्देश करते हैं अथवा उस पर निर्भर करते हैं, तो निस्संदेह उसकी प्रतियां निरुद्ध व्यक्ति को प्रदत्त की जानी होंगी। (पैरा 23)

इस मामले में भी जिला मजिस्ट्रेट के विरुद्ध कोई असद्भावपूर्ण अभिकथन विद्यमान नहीं है और इसलिए प्रतिशपथपत्र पेश करने में उसकी असफलता निरोध आदेश को दूषित नहीं बनाएगी। किन्तु इस विषय पर विचार का परित्याग इस बात पर जोर दिए बिना नहीं किया जा सकता कि निरोध प्राधिकारी के लिए यह महत्वपूर्ण था कि वह वर्तमान प्रकृति के मामलों में स्वयं अपना शपथपत्र फाइल करता। अनौचित्य में विभिन्न कोटियां होती है और जो रेखा गंभीर अनौचित्य और अवैधता के बीच विभाजन करती है उसका रेखांकन करना अत्यंत सूक्ष्म है और उस पर निर्णय लेना तो और भी कठिन है। (पैरा 27)

उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश संविधान के अनुच्छेद 136 तथा सम्बद्ध कानूनों के अन्य उपबंधों के अधीन अपीली अधिकारिता के अध्यधीन होते हैं। उल्लेखनीय है कि ऐसी प्रणाली जो कि अत्यंत अवांछनीय है और जिससे कि कोई उपयोगी प्रयोजन सिद्ध नहीं होता है वर्तमान स्थिति में प्रारंभिक अवस्था से कहीं आगे न बढ़ जाए। (पैरा 31)

## निर्दिष्ट निर्णय

| | | पैरा |
|---|---|---|
| [1981] | [1981] 1 एस० सी० आर० 640 :<br>इच्छू देवी चौरड़िया बनाम भारत संघ<br>(Ichhu Devi Choraria *V.* Union of India); | 23 |

1983(12) eILR(PAT) SC 1



[1980] [1980] 3 उम० नि० प० 239=[1980] 1 एस० सी० आर० 258:
मोहम्मद यूसुफ राठर बनाम जम्मू-कश्मीर राज्य
(Mohammad Yousuf Rather *v.* State of Jammu and Kashmir); 14

[1975] [1975] 2 उम० नि० प० 337=[1975] 2 एस० सी० आर० 832:
खुदीराम दास बनाम पश्चिमी बंगाल राज्य
(Khudiram Das *v.* State of West Bengal); 13

[1974] [1974] 1 एस०सी०आर० 281:
हर जसदेव सिंह बनाम पंजाब राज्य
(Har Jasdev Singh *v.* State of Punjab); 21

[1974] ए० आई० आर० 1974 एस० सी० 2337:
वकील सिंह बनाम जम्मू-कश्मीर राज्य
(Vakil Singh *v.* State of Jammu and Kashmir); 22

[1974] [1974] 3 एस० सी० आर० 258:
शेख हनीफ बनाम पश्चिमी बंगाल राज्य
(Shaik Hanif *v.* State of West Bengal); 26

[1973] ए० आई० आर० 1973 एस० सी० 2455:
बनी माधव शॉ बनाम पश्चिमी बंगाल राज्य
(Beni Madhob Shaw *v.* The State of West Bengal); 20

[1972] ए० आई० आर० 1972 एस० सी० 2215:
निरंजन सिंह बनाम मध्य प्रदेश राज्य
(Niranjan Singh *v.* State of Madhya Pradesh); 26

[1953] [1953] 1 एस० सी० आर० 708:
डा० रामकृष्ण भारद्वाज बनाम दिल्ली राज्य
(Dr. Ramkrishan Bhardwaj *v.* The State of Delhi). 12

**दांडिक अपीली अधिकारिता : 1983 की दांडिक अपील सं० 692.**

1983 की दांडिक रिट याचिका सं० 516 में चंडीगढ़ स्थित पंजाब-हरियाणा उच्च न्यायालय के तारीख 29 नवम्बर, 1983 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध की गई अपील।

**अपीलार्थियों की ओर से** — सर्वश्री के० पारासरन, भगवंत सिंह, गुरमुख सिंह, डी० एस० बरार, जी० एस० मान, आर० डी० अग्रवाल और कुमारी ए० सुभाषिणी तथा श्री एस० के० बग्गा।

**प्रत्यर्थी की ओर से** — सर्वश्री हरदेव सिंह, जी० एस० ग्रेवाल, एन० एस० दास बहल, आर० एस० सोढी और जे० एस० संधावालिया

न्यायलय का निर्णय मुख्य न्यायमूर्ति वाई० वी० चन्द्रचूड़ ने दिया

**मुख्य न्यायामूर्ति चन्द्रचूड़—**

यह अपील 1983 की दांडिक रिट याचिका सं० 516 में पंजाब हरियाणा उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायमूर्ति के तारीख 29 नवम्बर, 1983 वाले निर्णय के विरुद्ध विशेष इजाजत लेकर की गई है। उक्त रिट याचिका प्रत्यर्थी श्री जगदेव सिंह तलवंडी द्वारा फाइल की गई थी जिसके द्वारा 3 अक्तूबर, 1983 को जिला मजिस्ट्रेट लुधियाना द्वारा पारित निरोध आदेश पर आक्षेप किया गया था जिससे कि प्रत्यर्थी को राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, 1980 की धारा 3 (2) के साथ पठित धारा 3(3) के अधीन निरुद्ध किया गया था।

2. प्रत्यर्थी को 3 और 4 अक्तूबर, 1983 के बीच की रात को निरोध आदेश के अनुसरण में हिरासत में लिया गया था। उसे प्रारंभ में केन्द्रीय कारागार, पटियाला में रखा गया था और वहां से उसे अम्बाला, बड़ौदा और फतहगढ़ (उत्तर प्रदेश) ले जाया गया था। उसने उच्च

न्यायालय में रिट याचिका सं० 463/83 फाइल की जिसके द्वारा उसने अम्बाला से सुदूरपूर्वक स्थान में अन्तरण तथा निरुद्ध किये जाने पर आक्षेप किया। उसने सरकार द्वारा यह आश्वासन दिए जाने पर कि उसे अम्बाला वापस भेज दिया जाएगा और सरकार ने वस्तुत: उसे 28 अक्तूबर को भेज भी दिया, उस याचिका को वापस ले लिया।

3. 6 अक्तूबर, 1983 को प्रत्यर्थी पर निरोध आधारों की तामील की गई। उन आधारों से यह दर्शित होता है कि याची को ऐसे दो भाषणों के आधार पर निरुद्ध किया गया था जिनके बारे में यह अभिकथि किया गया था कि वे उसके द्वारा एक तो 8 जुलाई, 1983 को निहंग छावनी, बाबा बकाला, जिला अमृतसर में दिया गया था और दूसरा भाषण 20 सितम्बर, 1983 को गुरुद्वारा मंजी साहब, अमृतसर में दिया गया था। याची को जो आधार प्रस्तुत किए गए थे, वे इस प्रकार थे--

"(1) कि आपने 8 जुलाई, 1983 को बाबा बकाला, जिला अमृतसर में निहंग छावनी के नाम से ज्ञात स्थान पर 1 बजे पूर्वाह्न से लेकर 4.45 बजे अपराह्न पर्यन्त हुए शहीदी सम्मेलन में एक भड़काने वाला भाषण सिक्खों के एक समूह के समक्ष दिया था जिसमें लगभग 2000/2200 व्यक्ति थे और वहां आपने बाबा बकाला और तरनतारन में निहंगों और पुलिस के बीच हुई झड़पों के तारीख 2 जुलाई, 1983 की घटना के प्रति प्रत्यक्ष उल्लेख किया था और इस बात पर जोर दिया था कि बदला लेने के लिए सिख उक्त मुठभेड़ों में मारे गए दो निहंगों के बदले में पुलिस के चार व्यक्तियों को मौत के घाट उतार देंगे।

(2) कि अखिल भारतीय सिक्ख छात्र फैडरेशन (ए०आई०एस० एस०एफ०) द्वारा संयोजित सम्मेलन को गुरुद्वारा मंजी साहब अमृतसर में संबोधित करते समय जिसमें कि लगभग 7000/8000 सिक्ख विद्यार्थी हाजिर थे एक भड़काने वाला भाषण दिया जिसमें आपने यह कहा कि चूंकि अकाली मोर्चे के लिए किए गए सब प्रयत्न निष्फल हो चुके हैं इसलिए अब भी समय है कि पंजाब में केन्द्रीय सरकार के समानान्तर एक सरकार स्थापित की जाए और आपने यह बताया था कि आप ऐसी सरकार गठित करने की स्थिति में है। इसके अतिरिक्त आपने

इस बात पर जोर दिया कि संबद्ध समस्याओं का एकमात्र हल खालसा राज की स्थापना है । आपने यह सुझाव भी दिया कि सरकार तब तक किसी भी मांग को स्वीकार नहीं करेगी जब तक कि उसे मजबूरन ऐसा न करना पड़े। यह कथन विभिन्न समाचार-पत्रों में प्रकाशित हुआ। भारतीय दंड संहिता की धारा 124क तथा विधि-विरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम, 1967 के अधीन तारीख 27-9-1983 को मामले संबंधी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं० 295 पुलिस थाना "ई" खंड अमृतसर में दर्ज कराई गई जो कि अन्वेषणाधीन है।"

4. निरोध प्राधिकारी ने निरोध आदेश के अंतिम पैरा में यह कथन किया कि प्रत्यर्थी को अंग्रेजी अनुवाद सहित पंजाबी (गुरुमुखी) लिपि में निरोध आधार प्रस्तुत किए जा रहे हैं और साथ ही "निरोध के कारणों का आधार गठित करने वाली समर्थक सामग्री" दी जा रही है। वह "समर्थक सामग्री" जिसके द्वारा निरोध के कारणों की विशिष्टियां अभिप्रेत हैं कारणों के साथ-साथ प्रत्यर्थी को दे दी गई । इन विशिष्टियों में अभिकथित रूप से प्रत्यर्थी द्वारा दिए गए भाषणों की रिपोर्ट विद्यमान है जिस रूप में कि वह पंजाब पुलिस की सी० आई० डी० शाखा द्वारा अभिलिखित किया गया है। ये विशिष्टियां जिनका कि अंग्रेजी में अनुवाद उच्च न्यायालय के समक्ष प्रदर्श ए-1 के रूप में पेश किया गया था, इस प्रकार है—

"भाषण देते समय उन्होंने यह कहा था कि 2 जुलाई को सीमा सुरक्षा बल, पंजाब पुलिस और दूसरी पुलिस द्वारा निःशस्त्र निहंगों पर गोली चलाई गई थी । ऐसी कोई गिनती प्राप्य नहीं है कि कितने व्यक्ति मारे गए थे क्योंकि सिक्खों की कोई हाजिरी नहीं ली गई थी कि कितने व्यक्ति आए थे और कितने व्यक्ति वहां से चले गए थे।

आगे यह कहा गया कि पंजाब में सैकड़ों निर्दोष सिक्खों को गोलियों का शिकार बनाया गया है । सरकार ने यह देखा है कि सिक्ख धर्म के अनुयायी शहीदों को श्रद्धांजलि अर्पित करने के पश्चात् चले जाते हैं। अब हमें यह विनिश्चय करना होगा कि हमें क्या कदम उठाने चाहिए। गुरु की प्रिय सेना (निहंगों) ने हमारे चोलों और ग्रंथ साहब की रक्षा की है। यह सही है कि उनमें से कुछ

निहंग गलतियां भी करते हैं। उन्हें दंड दिया जाना चाहिए। हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि हम उतने ही पुलिस के आदमियों की हत्या करें जितने हमारे व्यक्तियों को वे मौत के घाट उतारते हैं अन्यथा वे धीरे-धीरे हमें समाप्त कर डालेंगे।

नए पुलिस महा-निरीक्षक श्री भिंडर ने यह कहा है कि दरबार साहब में कोई उग्रवादी नहीं है। आगे यह कहा गया कि कांग्रेस आप में से आत्म-सम्मान को समाप्त करना चाहती है। अकाली दल द्वारा जो मोर्चा प्रारंभ किया गया है वह सिक्खों के उपसंजात होने की संरक्षा के लिए है। पुलिस को इनाम दिए गए हैं, क्या उन्होंने कोई लड़ाई जीती है? निहंगों पर भारी आक्रमण पूर्व योजनाबद्ध कार्यक्रम के अनुसार था। मैं तो यह कहूंगा कि यदि उन्होंने हमारे दो व्यक्तियों की हत्या की है तो आप पुलिस के चार व्यक्तियों को मार दें। यदि वे इस प्रकार मेरी हत्या करने आ जाएं तो मैं उनको मारकर ही मरूंगा। मैं कभी पीछे नहीं हटूंगा। आगे उन्होंने यह कहा कि यदि हम न्यायिक जांच करवाएं तो यह निरर्थक सिद्ध होगी। ऐसी जांचों का कोई परिणाम नहीं निकलता। अब कार्य पुलिस अधिकारियों को न्यायिक शक्ति दे दी गई है। वे किसी भी व्यक्ति को मार सकते हैं और वे अपनी जांच को पूरा कर लेते हैं और फाइल का पेट भर लेते हैं।"

5. उच्च न्यायालय में निरोध आदेश के जिन आधारों पर आक्षेप किया गया था उनमें से एक आधार यह था कि राज्य सरकार संविधान के अनुच्छेद 22(5) के अधीन अपनी बाध्यता का निर्वहन करने में असफल रहा है क्योंकि उसने प्रत्यर्थी को निरोध आदेश के विरुद्ध सलाहकार बोर्ड के समक्ष अभ्यावेदन करने का प्रभावी अवसर प्रदान नहीं किया है। यदि इसे विनिर्दिष्ट रूप से कहा जाए तो विद्वान न्यायाधीश द्वारा पूछे जाने पर, प्रत्यर्थी के काउंसेल ने उच्च न्यायालय में यह कथन किया कि राज्य सरकार ने ऐसी समर्थक सामग्री प्रत्यर्थी को उपलब्ध नहीं की थी जिसके आधार पर निरोध आधारों में से आधार सं० 1 आधृत था। प्रत्यर्थी की ओर से हाजिर होने वाले श्री हरदेव सिंह ने यह रुख अपनाया कि ऐसा स्पष्ट करके कि प्रत्यर्थी का पक्षकथन यह है कि निरोध आदेश के प्रथम आधार में कथित सुसंगत तथ्य का उसे उपलब्ध कराई गई समर्थक सामग्री का सर्वथा अभाव है और इसलिए 'कोई भी विवेकशील व्यक्ति उस सामग्री के

आधार पर संभवतः निरोध आदेश पारित नहीं कर सकता था। विद्वान काउन्सेल ने यह आग्रह किया कि निरोध आदेश या तो इस कारण विधि-विरुद्ध था कि निरुद्ध करने वाले प्राधिकारी ने अपनी मनःबुद्धि का प्रयोग अपने समक्ष विद्यमान सामग्री के संबंध में नहीं किया था अथवा अनुकल्पतः इस कारण कि कोई ऐसी अन्य सामग्री विद्यमान थी जिसके आधार पर निरोध आदेश पारित किया गया था और उक्त सामग्री प्रत्यर्थी को उपलब्ध नहीं कराई गई थी।

6. प्रत्यर्थी की दलील की सही प्रकृति पर ध्यान केन्द्रित करने के प्रयोजन के लिए एवं अभिकथित रूप से उसे कारित प्रतिकूल प्रभाव हेतु, उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायमूर्ति ने एक विलक्षणतापूर्ण युक्ति का आश्रय लिया। उन्होंने निरुद्ध करने वाले प्राधिकारी तथा निरुद्ध व्यक्ति के बीच उस वार्तालाप को विरचित कर लिया, जो कि इस मामले में उनके परस्पर विरोधी दावों के विषय पर था। वह काल्पनिक वार्तालाप, कम से कम उसकी नवीनता के गुण को देखते हुए, निम्नलिखित रूप में प्रतिपादित किया जाता है —

"(निरोध प्राधिकारी तथा निरुद्ध व्यक्ति एक दूसरे के समक्ष थे।)

**निरोध प्राधिकारी** : (निरुद्ध व्यक्ति के समक्ष आधार सं० 1 का परिशीलन करने के पश्चात्) : आपने वह आक्षेपणीय भाषण दिया था।

**निरुद्ध व्यक्ति** : महोदय, ऐसा प्रतीत होता है कि आपको गलत सूचना दी गई है। मैंने शहीदी सम्मेलन में किसी ऐसे समय पर, ऐसी तारीख को अथवा 'निहंग छावनी' के नाम से ज्ञात बाबा बकाला, जिला अमृतसर में किसी सिक्ख सभा के समक्ष, जिसमें 2000/2200 व्यक्ति बताए गए हैं, कोई भाषण, चाहे वह भड़काने वाला हो या अन्यथा हो, जैसा कि आधार सं० 1 में से पढ़ा गया है, नहीं दिया था।

**निरोध प्राधिकारी**: (अपने तथ्यों के बारे में पूर्णतः आश्वस्त रहते हुए, वे सी० आई० डी० की रिपोर्ट निकालते हैं और उसे निरुद्ध व्यक्ति के हाथ में दे देते हैं): सी० आई० डी० की रिपोर्ट को ध्यानपूर्वक पढ़िए क्योंकि आधार सं० 1 उसी रिपोर्ट पर आधारित है।

**निरुद्ध व्यक्ति** : महोदय, इस रिपोर्ट में ऐसा कोई निर्देश नहीं किया गया है कि मैंने उक्त समय पर, उक्त तारीख को, उक्त स्थान पर

1983(12) eILR(PAT) SC



बाबा बकाला में एवं 2000/2200 की संख्या वाली सिक्ख सभा के समक्ष शहीदी सम्मेलन में ऐसा कोई भाषण दिया था।

**निरोध प्राधिकारी:** (रिपोर्ट को निरुद्ध व्यक्ति के हाथ से वापस लेता है और उसकी भलीभांति संवीक्षा करता है और किंचित् अप्रसन्नता प्रकट करते हुए कहता है) : हां आप ठीक कह रहे हैं। जो महत्वपूर्ण दत्त सामग्री आधार सं० 1 में वर्णित है, उसका समर्थक सामग्री में से अभाव है। (अपनी मनःस्थिति को शीघ्र पुनर्ग्रहण करते हुए, निरुद्ध करने वाले प्राधिकारी ने आगे यह कहा) : यह कोई महत्व की बात नहीं है यदि समर्थक सामग्री में से महत्वपूर्ण तथ्यों का अभाव है। समर्थक सामग्री से कम से कम इस बात का पता चलता है कि आपने कहीं न कहीं, किसी न किसी समय, किसी न किसी तारीख को और कुछ व्यक्तियों के समक्ष आक्षेपणीय शब्दों का प्रयोग किया था।

**निरुद्ध व्यक्ति** : महोदय, किंतु यह वह भाषण नहीं था जिसके आधार पर आप कार्यवाही करने जा रहे थे। आप तो मेरे विरुद्ध आधार सं० 1 में वर्णित भाषण के आधार पर कार्यवाही करने वाले थे।

**निरोध प्राधिकारी** : ठीक है। (ऐसा कहकर निरुद्ध करने वाले प्राधिकारी ने आधारों में एक अन्य भाषण के आधार पर एक और आधार सम्मिलित करते हुए निरुद्ध व्यक्ति के निरोध के संबंध में आदेश दिया। निरुद्ध करने वाले प्राधिकारी ने निरुद्ध व्यक्ति पर निरोध आदेश की तामील की जिसके अन्तर्गत निरोध के दो आधार अन्तर्विष्ट थे। साथ ही साथ निरुद्ध करने वाले प्राधिकारी ने निरुद्ध व्यक्ति को समर्थक सामग्री का प्रदाय कर दिया)।"

7. अभिलेख को समीचीन बनाने के लिए और और विद्वान न्यायाधीश को औचित्य प्रदान करने के लिए हमारे लिए यह आवश्यक है कि हम इस बात को वर्णित कर दें कि उसने इस वार्तालाप का वृतांत ऐसी रीति में किया था जो किंचित भिन्न थी जहां तक कि प्ररूप का संबंध है, किंतु सार की दृष्टि से वह सही थी। उसने निरंतर प्ररूप में वार्तालाप का वर्णन किया है। हमने इसका प्रतिपादन, संवाद के तौर पर जैसा कि किसी नाटक में होता है, किया है और इसमें अपनी ओर से हमने कुछ नहीं जोड़ा। वास्तव

में हमने इस बात का ध्यान रखा है विद्वान न्यायाधीश द्वारा कल्पित वार्तालाप, जो उन्होंने सूझबूझ से प्रस्तुत किया है, उसमें किसी प्रकार के कोई परिवर्तन न हो पाएं और उन्हें जो प्रश्न तथा उत्तर सूझें, वे एक प्रकार से विषय का सारतत्व हैं और चाहे जो भी हो, वे इस निर्णय का सार गठित करते हैं।

8. विद्वान न्यायाधीश की बाबत, उनके निर्णयानुसार जो त्रुटि हुई है, वह इस सुगम, अपरोक्षित उपधारणा के कारण हुई है, जोकि उन्होंने मामले के महत्वपूर्ण पहलू पर अपनाई है। निरुद्ध व्यक्ति ने निरुद्ध करने वाले प्राधिकारी को इस बात का स्मरण कराया कि सी० आई० डी० की रिपोर्ट में ऐसा कोई निर्देश नहीं किया गया था कि उसने "बताए गए समय पर कथित तारीख को, स्थान-विशेष पर बाबा बकाला में और 2000/2200 की संख्या की एक सिक्ख सभा के समक्ष शहीदी सम्मेलन में" कोई भाषण दिया था। निरुद्ध करने वाले प्राधिकारी के लिए यह संभव नहीं था कि वे मात्र यह कहकर इस प्रश्न का उत्तर देते कि निरुद्ध व्यक्ति का कहना ठीक था। निरुद्ध व्यक्ति का कथन मात्र औपचारिक अथवा तकनीकी दृष्टि से उपयुक्त था। इसका कारण यह है कि जो सी० आई० डी० की रिपोर्ट निरोध के आधारों सहित उसे प्रदत्त की गई थी, उसमें यह अभिव्यक्त अनुबंध मौजूद था कि वह "निरोध के कारणों का आधार" गठित करती थी। इन आधारों में प्रत्येक ब्योरे का उल्लेख किया गया है जिसका उल्लेख किया जाना आवश्यक नहीं था। सी० आई०डी० की रिपोर्ट निरुद्ध व्यक्ति को इस रूप में प्रस्तुत की गई थी मानो कि वह उस जानकारी का स्रोत गठित करती थी जो इस निष्कर्ष की ओर ले जाता था कि उसने भाषण दिया था जिससे कि लोक व्यवस्था के हितों में उसका निरोध आवश्यक हो गया था। इन परिस्थितियों में, निरुद्ध व्यक्ति को जो आधार तथा सामग्री प्रस्तुत की गई थी, उनका परिशीलन एक साथ किया जाना है मानो कि सी०आई०डी० की रिपोर्ट के रूप में सामग्री निरोध के आधारों को अग्रसर करती थी।

9. निरुद्ध व्यक्ति के समक्ष निरुद्ध करने वाले प्राधिकारी द्वारा जो स्पष्ट उत्तर दिया गया था, जैसा कि विद्वान न्यायाधीश द्वारा कल्पना की गई है वह निरोध प्राधिकारी की ओर से वास्तविक विधिक स्थिति के साथ पर्याप्त अनभिज्ञता दर्शित करती है। यही नहीं, बल्कि यह तो

1983(12) eILR(PAT) SC



यह भी दर्शित करता है कि निरुद्ध करने वाले प्राधिकारी ने इस बात को विस्मृत कर दिया था कि विशिष्टियों तथा आधारों के बारे मे यह अभिव्यक्ति किया गया था कि उन्हें एक साथ जोड़ा जाए क्योंकि विशिष्टियां आधारों का आधार गठित करती थीं। निरुद्ध करने वाले प्राधिकारी को चाहिए था कि वह निरुद्ध व्यक्ति को यह बात स्पष्ट कर देता कि हालांकि जो विशिष्टियां उसे प्रस्तुत की गई थीं उनमें विभिन्न ब्यौरे वर्णित नहीं किए गए थे तथापि उसे आधारों के साथ-साथ विशिष्टियों का प्रदाय किया गया था, यह कि साथ ही साथ यह अभिव्यक्त रूप में स्पष्ट कर दिया गया था कि वे आधारों में कथित तथ्यों से संबंधित थीं यह कि दोनों का परिशीलन एक साथ किया जाना था और यह कि आधारों में पूरे ब्यौरों सहित आवश्यक तथ्य अन्तर्विष्ट थे। संवाद वहीं समाप्त हो जाना चाहिए था और मामला विरत कर दिया जाना चाहिए था। वस्तुतः संवाद, हालांकि वह विद्वान न्यायाधीश द्वारा ध्यानपूर्वक विरचित किया गया था, उसमें इस बात की अवधारणा की गई थी कि विनिश्चय क्या किया जाना है, अर्थात क्या निरुद्ध व्यक्ति को जो विशिष्टियां प्रस्तुत की गई थीं, वे अधिकथित त्रुटि से ग्रस्त थीं।

10. तथापि हम स्वतंत्र रूप से प्रत्यर्थी की इस दलील की जांच करेंगे कि वह निरुद्ध आदेश के विरुद्ध कारागार में अभ्यावेदन प्रस्तुत नहीं कर सका चूंकि जो सामग्री उसे पेश की गई थी अर्थात् भाषण की सी० आई० डी० रिपोर्ट जिसके बारे में यह अभिकथित था कि वह उसने शहीदी सम्मेलन के समक्ष दिया था और इस रिपोर्ट में वे तात्विक विशिष्टियां अन्तर्विष्ट नहीं थीं जो कि उन आधारों का महत्वपूर्ण संघटक गठित करती थीं जिसकी तामील उस पर की गई थी। उसकी व्यथा यह है कि उसके भाषण की सी०आई०डी० रिपोर्ट में यह वर्णित नहीं था कि : (1) सम्मेलन 8 जुलाई 1983 को हुआ था; (2) वह निहंग छावनी में हुआ था; (3) वह 11.00 बजे पूर्वाह्न तथा 4.45 अपराह्न के बीच हुआ था; (4) यह "शहीदी सम्मेलन" था; (5) सम्मेलन में 2000 से लेकर 2200 तक व्यक्ति सभा में विद्यमान थे; और यह कि (6) उसके द्वारा जो भाषण दिया गया था, वह बाबा बकाला और तरन तारन में किसी मुठभेड़ के प्रति निर्देश करता था।

1983(12) eILR(PAT) SC 1



11. संविधान का अनुच्छेद 22(5), जिससे कि प्रत्यर्थी की दलील संबंधित है, इस प्रकार है—

> "जब किसी व्यक्ति को निवारक निरोध का उपबंध करने वाली किसी विधि के अधीन किए गए आदेश के अनुसरण में निरुद्ध किया जाता है तब आदेश करने वाला प्राधिकारी यथा शीघ्र उस व्यक्ति को यह संसूचित करेगा कि वह आदेश किन आधारों पर किया गया है और उस आदेश के विरुद्ध अभ्यावेदन करने के लिए उसे शीघ्रतिशीघ्र अवसर देगा।"

12. यह अनुच्छेद अनेक मामलों में इस न्यायालय के समक्ष विचारार्थ उद्भूत हुआ है। इस अनुच्छेद के निर्वचन पर इस न्यायालय के सर्वप्रथम निर्णयों में से एक **डा० रामकृष्ण भारद्वाज बनाम दिल्ली राज्य**[1] वाले मामले में प्रतिवदित है, जिसमें मुख्य न्यायाधिपति पातंजली शास्त्री ने यह सम्प्रेक्षण किया था कि संविधान के अनुच्छेद 22(5) के अधीन निरुद्ध व्यक्ति को इस बात का अधिकार प्राप्त है कि उसे उसके निरोध के आधारों की विशिष्टियां प्रस्तुत की जाएं जो कि "कोई अभ्यावेदन प्रस्तुत करने के लिए उसे समर्थ बनाने हेतु पर्याप्त हों विचार किए जाने पर वे उसे अनुतोष प्रदान कर सकें।"

13. **खुदीराम दास बनाम पश्चिमी बंगाल राज्य**[2] वाले एक ऐसे मामले में इस न्यायालय की चार न्यायाधिपतियों की न्यायपीठ का निर्णय था जो कि आन्तरिक सुरक्षा अधिनियम, 1971 के अधीन उद्भूत हुआ था। हम में से एक अर्थात् न्यायाधिपति भगवती जिन्होंने कि न्यायालय की ओर से निर्णय सुनाया था, निरुद्ध करने वाले प्राधिकारी की बाध्यता के प्रश्न पर निर्भर करने वा विनिश्चयों का सर्वेक्षण किया था और उस बाध्यता की प्रकृति का स्पष्टीकरण इस प्रकार दिया था—

> "अतः आधारभूत तथ्य और तात्विक विशिष्टियां जो निरोध के आदेश की नींव है अनुच्छेद 22(5) और धारा 8 के अंतर्गत "आधारों" के भीतर आएंगीं और वे निरुद्ध व्यक्ति को संसूचित की जानी अपेक्षित हैं जब तक कि उनका प्रकट किया जाना

---

[1] [1953] 1 एस० सी० आर० 708.

[2] [1975] 2 उम० नि० प० 337=[1975] 2 एस० सी० आर० 832.

प्राधिकारी द्वारा लोकहित के विरुद्ध न माना जाए। यह मत इस न्यायालय द्वारा विनिश्चयों की एक श्रृंखला में लगातार अपनाया गया है।

14. **मोहम्मद यूसुफ राठर** बनाम **जम्मू-कश्मीर राज्य**[1] वाले मामले में न्यायमूर्ति चिन्नप्पा रेड्डी ने अपने सहमत निर्णय में संविधान के अनुच्छेद 22(5) की विवक्षाओं पर इस प्रकार विचार किया था––

> "इस न्यायालय द्वारा अनेक बार व्यक्त मत में अनुच्छेद 22(5) के विस्तार और अंतर्वस्तु पर विचार किया गया (मुम्बई राज्य **बनाम** आत्माराम [1951] एस० सी० आर० 167, डा० रामकृष्ण भारद्वाज **बनाम** दिल्ली राज्य [1953] एस०सी०आर० 708, शिब्बन लाल सक्सेना **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य [1954] एस०सी०आर० 418; द्वारका दास भाटिया **बनाम** जम्मू कश्मीर राज्य [1956] एस०सी०आर० 948 वाले मामले देखिए)। इस न्यायालय ने अनुच्छेद 22(5) का जो निर्वचन लगातार किया है, वह कदाचित मानव अधिकारों के उद्देश्य की पूर्ति में न्यायालय के अनेक महत्वपूर्ण योगदानों में से एक है। अब विधि सुस्थिर हो चुकी है कि निरुद्ध व्यक्ति के संविधान के अनुच्छेद 22(5) के अधीन दो अधिकार हैं – (1) उन अधिकारों के बारे में यथाशक्यशीघ्र जानकारी प्राप्त करने का अधिकार, जिन पर निरोध का आदेश आधारित है, अर्थात् उन आधारों के बारे में जानकारी प्राप्त करने का अधिकार जिनके परिणामस्वरूप निरोध प्राधिकारी का व्यक्तिपरक समाधान हुआ था, और (2) निरोध के आदेश के विरुद्ध अभ्यावेदन करने का पूर्वतन अवसर दिए जाने का अधिकार अर्थात् यह कि उसको पर्याप्त विशिष्टियां प्रस्तुत की जानी चाहिएं, जिससे कि वह अभ्यावेदन करने में समर्थ हो सके जो कि विचार किए जाने पर उसे अनुतोष दिला सके।"

**खुदीराम दास** बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य**[2] वाले मामले में यह सम्प्रेक्षण किया गया था कि ये दो रक्षोपाय "न्यूनतम" हैं जिनका उस कार्यपालिक प्राधिकारी द्वारा पालन किया ही जाना चाहिए जिससे किसी व्यक्ति को निवारात्मक रूप से निरुद्ध करने की इजाजत दी जाए और इस प्रकार लोक हित और सामाजिक सुरक्षा के नाम पर व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार को समाप्त करने की इजाजत दी जाए।

---

[1] [1980] 3 उम० नि० प० 239=[1980] 1 एस० सी० आर० 258.

[2] [1975] 2 उम० नि० प० 337=[1975] 2 एस० सी० आर० 832.

15. जिस प्रश्न पर हमें इन विनिश्चयों के प्रकाश में विचार करना है, वह यह है कि क्या निरोध के प्रथम आधार की पर्याप्त विशिष्टियां प्रत्यर्थी को उपलभ्य की गई थीं जिनसे कि वह इस योग्य समर्थ हो सके कि वह निरोध के आदेश के विरुद्ध अभ्यावेदन करने के अपने सांविधानिक अधिकार का कारगर रूप से प्रयोग कर सके। इस निमित्त जो बाध्यता निरुद्ध करने वाले प्राधिकारी पर आश्रित है, उसका कोई अपवाद नहीं हो सकता और उसकी कठोरता में किन्हीं भी परिस्थितियों में ढील नहीं दी जा सकती।

16. इस प्रश्न पर सतर्कतापूर्वक विचार करते हुए हमें यह असंभव प्रतीत होता है कि हम उच्च न्यायालय के इस दृष्टिकोण को स्वीकार करें कि निरोध के प्रथम आधार की पर्याप्त विशिष्टियां निरुद्ध व्यक्ति को प्रस्तुत नहीं की गई थीं जिनके आधार पर कि वह निरुद्ध करने वाले प्राधिकारी के समक्ष प्रभावी अभ्यावेदन कर सकता अर्थात् ऐसा अभ्यावेदन कर सकता कि यदि वह स्वीकार कर लिया जाता तो उससे उसे अनुतोष प्राप्त हो जाता। यह कोई ऐसा मामला नहीं है जिसमें कि निरोध के आधार में उस निष्कर्ष संबंधी कोरा अथवा निराधार कथन मात्र अन्तर्विष्ट था जिस पर कि निरोध प्राधिकारी पहुंचा था अर्थात् यह कि निरोध आदेश पारित करना आवश्यक था जिससे कि निरुद्ध व्यक्ति को ऐसी रीति में कार्यवाही करने से प्रवारित किया जा सके जो कि लोक व्यवस्था के हितों के प्रतिकूल हो। निरोध के जिस प्रथम आधार से हमारा इस अपील में संबंध है, उस में प्रत्येक तात्विक विशिष्टि वर्णित की गई है जिसे जानने के लिए प्रत्यर्थी हकदार था ताकि वह निरोध आदेश के विरुद्ध पूर्ण तथा प्रभावी अभ्यावेदन कर सके। उस आधार में अभिकथित सम्मेलन के स्थान, तारीख और समय का वर्णन किया गया था। इसमें वह अवसर वर्णित है जिसके आधार पर सम्मेलन कराया गया था अर्थात् वह "शहीदी सम्मेलन" था। इसमें बैठक में उपस्थित व्यक्तियों की लगभग संख्या वर्णित की गई है। अन्ततः इसमें विशिष्ट रूप से वे विभिन्न कथन वर्णित किए गए हैं जो कि प्रत्यर्थी द्वारा अपने भाषण में दिए गए थे। निरोध के आधारों में वर्णित इन विशिष्टियों में उन तथ्यों का समस्त तारतम्य समाविष्ट है जो कि प्रत्यर्थी के लिए जानना आवश्यक था ताकि वह जागरूक अभ्यावेदन कर सकता। वे त्रुटियां जो कि

आधार सं० 1 के साथ प्रत्यर्थी को अनुपूरक विशिष्टियों के रूप में प्रस्तुतीकरण में विद्यमान थीं, उस स्थिति को प्रभावित नहीं कर सकती क्योंकि उनके द्वारा उक्त आधार में कथित तथ्यों में कोई अस्पष्टता अन्तःस्थापित नहीं होती और न ही वे उस आधार में वर्णित अभिकथनों के सार में से किंचित कमी करती है। इसलिए प्रत्यर्थी की यह दलील कि वह आधार सं० 1 की बाबत इस कारण प्रभावी अभ्यावेदन नहीं कर सका था क्योंकि उसे जो विशिष्टियां प्रस्तुत की गई थीं, उनकी दत्त-सामग्री अपर्याप्त थी रद्द करनी होगी।

17. किन्तु हमें इस बारे में किंचित् अचम्भा हुआ है कि इस प्रकृति के विषय में निरोध प्राधिकारी ने अपने कार्य के संबंध में किंचित प्रायिक और कल्पनारहित दृष्टिकोण अपनाया। हमने विद्वान महा-अटर्नी से यह कहा है कि वे हमारे समक्ष सी० आई० डी० रिपोर्ट का मूल रूप प्रस्तुत करें जिसका उद्धरण प्रत्यर्थियों को विशिष्टियों के तौर पर प्रस्तुत किया गया था। मूल रूप में उस बैठक से सम्बद्ध लगभग सभी तात्विक ब्यौरे शामिल हैं जिनका उल्लेख आधार सं० 1 में किया गया है। निरोध प्राधिकारी ने अनावश्यक रूप से दत्त सामग्री प्रस्तुत करते समय उसमें से कुछ कटौतियां कर लीं और दत्त सामग्री में जो तारीख, स्थान, समय और अवसर सम्मेलन के बारे में वर्णित किया गया था, उसका उल्लेख नहीं किया। निरोध प्राधिकारी की ओर से सूझबूझ के इस अभाव के परिणामस्वरूप प्रत्यर्थी को दलील का आभास मात्र पेश किया गया। इस न्यायालय ने अनेक मामलों में यह मत व्यक्त किया है कि जब कि निरोध संबंधी कोई आदेश पारित किया जाए तो निरोध प्राधिकारियों द्वारा अपने कार्य में समुचित सावधानी बरतनी चाहिए। निवारक निरोध एक आवश्यक दोष है किन्तु यह निश्चित रूप से आवश्यक है। अतः, दैहिक स्वाधीनता का प्रवंचन यदि वह कदाचित किया जाता है, तो वह संविधान के यथार्थ निबंधनों के आधार पर किया जाना होगा। इससे न्यूनतर कोई दृष्टिकोण चलने योग्य नहीं है। हम फिर एक बार समय-समय पर दी गई चेतना का उच्चारण इस आशा से करेंगे कि विवेक की वाणी को सुना जाएगा।

18. श्री हरदेव सिंह ने, आनुकल्पिक रूप से, यह दलील दी कि निरोध आदेश में मनःबुद्धि के प्रयोग का सर्वथा अभाव है क्योंकि

वह आदेश उस सी०आई०डी० रिपोर्ट के आधार पर पारित नहीं किया जा सकता था जिसमें कि उन तथ्यों में से किसी भी तथ्य के प्रति निर्देश नहीं किया गया है जिनका उल्लेख निरोध आदेश में किया गया है। यह निस्सन्देह सही है कि अपीलार्थियों का पक्षकथन यह है कि निरोध आदेश सी०आई०डी० रिपोर्ट पर आधारित है जिसका संबंध उस भाषण से है जो शहीदी सम्मेलन में प्रत्यर्थी द्वारा दिया गया था। किन्तु विद्वान काउन्सेल की दलील इस बात को नजरअन्दाज करती है कि प्रत्यर्थी को जो सामग्री प्रस्तुत की गई थी वह सी०आई०डी० रिपोर्ट का एक उद्धरण था, न कि समूची रिपोर्ट। तथापि, इससे प्रत्यर्थी पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा है क्योंकि उस पर आधारों तथा विशिष्टियों की तामील एक साथ कर दी गई थी और आधार सं० 1 प्रत्येक विचार्य ब्यौरे को वर्णित करता है जिसका उल्लेख करना आवश्यक था ताकि प्रत्यर्थी को इस योग्य बनाया जा सके कि वह निरोध आदेश के विरुद्ध समुचित अभ्यावेदन कर सके। प्रत्यक्षतः, निरोध प्राधिकारी के समक्ष सी०आई०डी० की सम्पूर्ण रिपोर्ट विद्यमान थी जिसके आधार पर उसने निरोध आदेश पारित किया था। प्रत्यर्थी को जो उद्धरण प्रस्तुत किया गया था, उसमें से मात्र आधार सं० 1 में समाविष्ट सामग्री विलुप्त की गई थी। इसलिए इस दलील को स्वीकार करना संभव नहीं है कि निरोध आदेश इस कारण विधिविरुद्ध है क्योंकि निरोध प्राधिकारी ने इस प्रश्न के बारे में अपनी मनःबुद्धि का प्रयोग नहीं किया था कि क्या ऐसी सामग्री मौजूद थी जिसके आधार पर प्रत्यर्थी को निरुद्ध किया जा सकता था।

19. आगे चलकर विद्वान काउन्सेल द्वारा यह दलील दी गई थी कि निरोध प्राधिकारी को चाहिए था कि वह उस साक्ष्य को प्रकट करता जिसके आधार पर निरोध आदेश पारित किया गया था क्योंकि ऐसे साक्ष्य के ज्ञान के अभाव में प्रत्यर्थी निरोध आदेश के विरुद्ध प्रभावी अभ्यावेदन नहीं कर सकता था। इस दलील में कोई सार नहीं है। यह कोई मान्य विधि नहीं है कि निरुद्ध व्यक्तियों के विरुद्ध निरोध प्राधिकारी द्वारा संकलित साक्ष्य निश्चित रूप से ही उसे प्रदत्त किया जाना चाहिए।

1983(12) eILR(PAT) SC 1



20. बेनी माधव शॉ बनाम पश्चिमी बंगाल राज्य[1] वाले मामले में निरुद्ध व्यक्ति की ओर से यह दलील दी गई थी कि जो कार्य-कलाप उसके द्वारा किए गए बताए गए थे, उसके ब्यौरे उसे प्रकट नहीं किए गए थे, जिसके परिणामस्वरूप सरकार के समक्ष अभ्यावेदन करने संबंधी उसके अधिकार पर गम्भीर रूप से प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था। इस न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया था कि चूंकि निरोध के आधारों को गठित करने वाले कार्यकलाप निरुद्ध व्यक्ति को स्पष्ट शब्दों में प्रकट कर दिए गए थे और चूंकि ऐसे प्रकटीकरण द्वारा निरुद्ध व्यक्ति को पर्याप्त जानकारी दे दी गई थी जिससे कि वह इस योग्य हो गया था कि अपने निरोध के विरुद्ध प्रभावी अभ्या-वेदन कर सकता। अतः जानकारी के स्रोतों का अप्रकटीकरण अथवा उस जानकारी के समुचित शब्द जो कि निरोध आदेश का आधार गठित करते थे, उनके विरुद्ध परिवाद नहीं किया जा सकता था।

21. हर जसदेव सिंह बनाम पंजाब राज्य[2] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि उपलभ्य तथ्यों से जो निष्कर्ष निकाले गए थे, वे ऐसे आधार गठित करते हैं और यह कि आधारों के संबंध में यह निश्चित है कि उनका प्रदाय निरुद्ध व्यक्ति को किया जाए। न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि निरुद्ध व्यक्ति न तो साक्ष्य को जानने का हकदार है और न ही जानकारी के स्रोत को : जो निश्चित रूप से उसे प्रस्तुत किया जाना चाहिए वह निरोध आधारों के रूप में है और उन विशिष्टियों के तौर पर है जो कि उसे, यदि वह ऐसा कर सके तो, पक्षकथन विरचित करने के योग्य बनाता है जिस पर कि निरोध प्राधिकारी विचार करेगा।

22. वकील सिंह बनाम जम्मू कश्मीर राज्य[3] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि चूंकि ताथ्यिक ब्यौरे से प्रभिन्न, आधारभूत तथ्य उस सामग्री में समाविष्ट थे जो कि निरुद्ध व्यक्ति को प्रदत्त किए गए थे, इसलिए उसे प्रभावी अभ्यावेदन करने हेतु योग्य बनाने के लिए उसे किसी अन्य बात की सूचना देना अपेक्षित नहीं था।

[1] ए० आई० आर० 1973 एस० सी० 2455.

[2] [1974] 1 एस० सी० आर० 281, 288.

[3] ए० आई० आर० 1974 एस० सी० 2337, 2341.

1983(12) eILR(PAT) SC 1



23. इन मामलों से यह दर्शित होता है कि निरुद्ध व्यक्ति न तो उसके विरुद्ध प्राप्त जानकारी के स्रोत के बारे में अवगत कराए जाने का हकदार है और न ही उस साक्ष्य से अवगत कराए जाने का जो कि उसके विरुद्ध संगृहीत किया गया हो, जैसे कि उदाहरणार्थ संपुष्टि करने वाला ऐसा साक्ष्य कि सी० आई० डी० की रिपोर्ट सत्य तथा सही थी। उसका अधिकार यह है कि वह प्रत्येक ऐसी तात्विक विशिष्टि को प्राप्त करे जिसके बिना पूर्ण तथा प्रभावी अभ्यावेदन विरचित नहीं किया जा सकता। यदि निरोध आदेश किसी दस्तावेज, कथन या अन्य सामग्री के प्रति निर्देश करते हैं अथवा उस पर निर्भर करते हैं, तो निस्संदेह उसकी प्रतियां निरुद्ध व्यक्ति को प्रदत्त की जानी होंगी जैसा कि इस न्यायालय द्वारा **इच्छू देवी चोरड़िया** बनाम **भारत संघ**[1] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया था। वह प्रश्न यहां उद्भूत नहीं होता है क्योंकि किसी ऐसी बात के प्रति निर्देश नहीं किया गया है और न ही प्रथम निरोध आधार में इस पर निर्भर किया गया है। वस्तुतः सी० आई० डी० रिपोर्ट का प्रस्तुत किया जाना, जिसका कि संकुचित उद्धरण प्रत्यर्थी को पेश किया गया था, प्रस्तुत मामले के तथ्यों के प्रकाश में निरर्थक प्रयोग था।

24. श्री हरदेव सिंह ने **खुदी राम**[2] वाले मामले में दिए गए निर्णय में से निम्नलिखित संदर्भ का अवलम्ब अपनी दलील के समर्थन में लिया कि सम्पूर्ण सामग्री जो निरोध प्राधिकारी के समक्ष थी और जिसमें उसके द्वारा संगृहीत साक्ष्य शामिल था, निरुद्ध व्यक्ति को पेश की जानी आवश्यक है —

> "किन्तु यदि निरोध के आधार उसे नहीं बतलाए जाते हैं तो वह किसी प्रकार भी प्रभावी अभ्यावेदन नहीं कर सकता है। अभ्यावेदन करने का अवसर छलावा हो जाएगा। अतः निरोध के आधारों के बतलाए जाने का आशय यह है कि इससे निरुद्ध व्यक्ति को प्रभावी अभ्यावेदन करने के प्रयोजन के लिए समर्थ बनाया जाए। यदि यह उपबंध करने का कि वे आधार जिन पर निरोध का आदेश किया गया है निरुद्ध

[1] [1981] 1 एस० सी० आर० 640, 650.

[2] [1975] 2 उम० नि० प० 337=[1975] 2 एस० सी० आर० 832.

व्यक्ति को बतलाए जाने चाहिएं, सही कारण यही है, तो यह स्पष्ट है कि "आधारों" से अभिप्रेत है सभी आधारभूत तथ्य और सामग्रियां जिन पर निरोध का आदेश करते समय निरोध करने वाले प्राधिकारी ने ध्यान दिया है और इसलिए जिन पर निरोध का आदेश आधारित है।"

इन संप्रेक्षणों का अर्थान्वयन इस रूप में नहीं किया जा सकता कि उनसे यह अभिप्रेत है कि निरोध प्राधिकारी द्वारा जो साक्ष्य संगृहीत किया गया था वह भी निरुद्ध व्यक्ति को दिया जाना चाहिए । जैसा कि रिपोर्ट के पृष्ठ 839 पर निर्णय के उसी पैरा में दर्शित होता है, अभिप्रेत यह था कि आधारभूत तथ्य तथा तात्विक विशिष्टियां जो निरोध आदेश का आधार गठित करती हैं, वे निश्चित रूप से निरुद्ध व्यक्ति को, सही अर्थों में, दी जानी चाहिएं क्योंकि वे निरोध के आधारों का भाग गठित करती हैं और यदि उसे उनसे अवगत नहीं कराया जाता तो निरुद्ध व्यक्ति के लिए यह संभव नहीं होता कि वह प्रभावी अभ्यावेदन कर सके ।

25. श्री हरदेव सिंह ने इस तथ्य में गंभीर त्रुटि देखी कि उच्च न्यायालय में प्रत्यर्थी द्वारा फाइल किए गए रिट पिटीशन के उत्तर में प्रति शपथपत्र पर शपथ श्री के० सी० महाजन, उप सचिव, गृह विभाग, पंजाब सरकार द्वारा ली गई थी, न कि जिला मजिस्ट्रेट, लुधियाना द्वारा जिन्होंने कि निरोध आदेश पारित किया था । हम इस दलील को विसंगत अथवा महत्वहीन कहकर टाल देने के लिए तैयार नहीं हैं । साधारण प्रकृति के मामलों में, यदि वस्तुतः निरोध के क्षेत्र में साधारण प्रकृति संबंधी कोई मामले होते भी हैं, तो प्रतिशपथपत्र के बारे में शपथ ऐसे व्यक्ति द्वारा ली जानी चाहिए जिसने कि मामले के अभिलेख में से अपना ज्ञान ग्रहण किया हो । तथापि वर्तमान प्रकृति के नाजुक मामलों में, निरोध प्राधिकारी को चाहिए कि वह रिट पिटीशन के उत्तर में स्वयं अपना शपथपत्र फाइल करे और उस न्यायालय के समक्ष सुसंगत तथ्यों को प्रस्तुत करे, जो कि उन्हें जानने के लिए विधिसम्मत रूप से हकदार है ।

26. **शेख हनीफ** बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य**[1] वाले मामले में पश्चिमी बंगाल राज्य की ओर से प्रतिशपथपत्र उप सचिव (गृह) द्वारा

---

[1] [1974] 3 एस० सी० आर० 258.

फाइल किया गया था जिन्होंने कि शासकीय अभिलेखों में अन्तर्विष्ट तथ्यों के आधार पर अपने शपथपत्र में प्रकथनों के सही होने के बारे में सत्यापन किया था। जिस जिला मजिस्ट्रेट ने निरोध आदेश पारित किया था, उसने शपथपत्र फ़ाइल नहीं किया था और अपना शपथपत्र फाइल न करने के संबंध में उसने जो स्पष्टीकरण दिया था उसके बारे में यह पाया गया था कि वह समाधानप्रद नहीं है। **निरंजन सिंह बनाम मध्य प्रदेश राज्य**[1] वाले एक पूर्वतर मामले का अनुसरण करते हुए इस न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया था कि बंदी प्रत्यक्षीकरण संबंधी रिट याचिका में जारी किए गए आदेश के उत्तर में राज्य के लिए यह वैवश्यक है कि वह न्यायालय का इस विषय में समाधान कर दे कि याची का निरोध अवैध है और वह न केवल उस अधिनियम के आज्ञापक उपबंधों के अनुकूल नहीं है जिनके अधीन निरोध आदेश पारित किया गया था बल्कि वह संविधान के अनुच्छेद 22(5) में विवक्षित अध्यपेक्षाओं के भी अनुकूल नहीं है। न्यायाधिपति सरकारिया ने न्यायालय की ओर से निर्णय सुनाते हुए यह मत व्यक्त किया था—

> "चूंकि न्यायालय निरपेक्ष मानकों द्वारा निरोध प्राधिकारी के वैयक्तिक समाधान की कसौटी पर ठीक उतरने से प्रवारित है, इसलिए यह और भी वांछनीय हो जाता है कि प्रारंभिक आदेश के उत्तर में राज्य की ओर से प्रतिशपथपत्र पर जिला मजिस्ट्रेट द्वारा अथवा ऐसे प्राधिकारी द्वारा शपथ ग्रहण की जानी चाहिए जिसके सापेक्ष समाधान पर धारा 3 के अधीन निरोध आदेश पारित किया गया था। यदि न्यायालय के समाधान-पर्यन्त दर्शित पर्याप्त कारणवश उस व्यक्ति का शपथ पत्र जिसने कि धारा 3 के अधीन निरोध आदेश पारित किया था, प्रस्तुत नहीं किया जा सकता तो प्रतिशपथपत्र के संबंध में शपथ किसी जिम्मेदार अधिकारी द्वारा ली जानी चाहिए जिसने कि स्वयं मामले पर विचार किया था अथवा राज्य के सचिवालय में मामले का प्रसंस्करण किया था या इसे मंत्री अथवा सम्यकतः प्राधिकृत ऐसे अन्य अधिकारी के समक्ष संविधान के अनुच्छेद 166 के अधीन राज्यपाल द्वारा विरचित

---

[1] ए० आई० आर० 1972 एस० सी० 2215.

1983(12) eILR(PAT) SC 1



कारबार के नियमों के अधीन पेश किया था ताकि ऐसे विषयों में सरकार के निमित्त आदेश पारित किया जा सके ।"

कतिपय अन्य विनिश्चयों का पुनर्विलोकन करने के पश्चात्, न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि उस जिला मजिस्ट्रेट द्वारा प्रतिशपथपत्र प्रस्तुत करने में असफलता, जिसने कि निरोध आदेश पारित किया था, अनुचित था हालांकि अधिकतर मामलों में यह अत्यंत महत्वपूर्ण नहीं होता, विशेष रूप से यदि निरोध प्राधिकारी के विरुद्ध कोई असद्भावपूर्ण अभिकथन नहीं किया गया था, परिणामस्वरूप, जिला मजिस्ट्रेट के शपथपत्र के अभाव के बारे में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि वह निरोध आदेश को दूषित नहीं करता है ।

27. इस मामले में भी जिला मजिस्ट्रेट के विरुद्ध कोई असद्भावपूर्ण अभिकथन विद्यमान नहीं है और इसलिए प्रतिशपथपत्र पेश करने में उसकी असफलता निरोध आदेश को दूषित नहीं बनाएगी । किन्तु हम इस विषय पर विचार का परित्याग एक बार फिर इस बात पर जोर दिए बिना नहीं कर सकते कि निरोध प्राधिकारी के लिए यह महत्वपूर्ण था कि वह वर्तमान प्रकृति के मामलों में स्वयं अपना शपथ पत्र फाइल करता । अनौचित्य में विभिन्न कोटियां होती हैं और जो रेखा गंभीर अनौचित्य और अवैधता के बीच विभाजन करती है उसका रेखांकन करना अत्यंत सूक्ष्म है और उस पर निर्णय लेना तो और भी कठिन है । संभवतः ऐसे मामले हो सकते हैं जिनमें कि निरोध प्राधिकारी द्वारा स्वयं अपना शपथपत्र फाइल करने में असफलता से अनौचित्य उद्भूत हो सकता है, जिससे कि निरोध आदेश दूषित करार दिया जा सकता है ।

28. अंततः, श्री हरदेव सिंह ने यह दलील दी कि जब सलाहकार बोर्ड द्वारा मामले की सुनवाई की जा रही थी, तो प्रत्यर्थी अपने काउंसेल को उचित अनुदेश देने में असमर्थ रहा था । काउंसेल का यह कहना है कि प्रत्यर्थी को कई स्थानों पर अंतरित किया गया और अन्ततः उसे बोर्ड के समक्ष कार्यवाहियों के प्रारंभ होने से एक घंटे के लगभग पूर्व सलाहकार बोर्ड के समक्ष पेश किया गया था । इस प्रकार उसके पास अपने काउंसेल को हिदायत देने हेतु कोई समय नहीं बचा था । हमें इस व्यथा में कोई सार प्रतीत नहीं होता है । सलाहकार बोर्ड के समक्ष प्रत्यर्थी का प्रतिनि-

1983(12) eILR(PAT) SC 1



धित्व एक अधिवक्ता द्वारा किया गया था। विद्वान अधिवक्ता ने प्रत्यर्थी के मामले पर बहस दो अन्य निरुद्ध व्यक्तियों के मामलों के साथ साथ की थी। ऐसा प्रतीत नहीं होता है कि ऐसी कोई व्यथा उसके द्वारा पेश की गई थी कि वह प्रत्यर्थी से अनुदेश अभिप्राप्त करने में असमर्थ रहा था ताकि वह इस योग्य नहीं था कि वह सलाहकार बोर्ड के समक्ष प्रभावी रूप से अपना पक्षकथन प्रस्तुत कर सके।

29. इन कारणों से, हम अपील मंजूर करते हैं और उच्च न्यायालय के निर्णय को अपास्त करते हैं। जैसा कि प्रत्यर्थी की ओर से काउंसेल ने इच्छा प्रकट की है, हम मामले को उच्च न्यायालय को प्रतिप्रेषित करते हैं जिससे कि वह अपने रिट पिटीशन में प्रत्यर्थी द्वारा पेश की गई शेष दलीलों को निपटा सके।

30. हम यह उल्लेख करने के लिए इस अवसर का लाभ उठाना चाहेंगे कि उच्च न्यायालयों द्वारा उत्तरोत्तर रूप से जो पद्धति अपनाई जा रही है उससे गंभीर कठिनाइयां उद्भूत होती हैं। यह वांछनीय है कि जिस अंतिम आदेश को उच्च न्यायालय पारित करने का आशय रखता है, उसको घोषणा तब तक नहीं की जानी चाहिए जब तक कि प्रख्यापित किए जाने हेतु कोई सकारण निर्णय तैयार न हो। उदाहरणार्थ, मान लीजिए कि सकारण निर्णय के बिना अंतिम आदेश उच्च न्यायालय द्वारा इस विषय में प्रख्यापित कर दिया जाता है कि किसी मकान को गिरा दिया जाएगा अथवा किसी बालक की अभिरक्षा आदेश के विरुद्ध माता-पिता में से किसी एक को सौंप दी जाएगी या यह कि किसी गंभीर आरोप से अभियुक्त किसी व्यक्ति को दोषमुक्त कर दिया जाएगा अथवा यह कि कोई कानून असांविधानिक है या जैसा कि प्रस्तुत मामले में है, यह कि किसी निरुद्ध व्यक्ति को निरोध से रिहा कर दिया जाएगा। यदि ऐसे आदेशों को पारित करने का उद्देश्य उनका त्वरित अनुवर्तन सुनिश्चित करना है तो यदि व्यथित पक्षकार उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध इस न्यायालय में विशेष इजाजत याचिका फाइल कर देता है तो पूर्वोक्त उद्देश्य प्रायः निष्फल हो जाएगा। इससे यह न्यायालय विकट स्थिति में पड़ जाता है क्योंकि उच्च न्यायालय की युक्तियुक्तता के लाभ के बिना इस न्यायालय के लिए यह कठिन है कि वह यह अनुज्ञा दे कि कारण से विहीन आदेश को कार्यान्वित कर दिया जाए। अनिवार्य रूप से, इसका परिणाम यह है कि

उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश का प्रवर्तन, सकारण निर्णय के सुनाए जाने के लंबित रहते हुए स्थगित रखना होगा।

31. यह विचारणीय है कि इस न्यायालय द्वारा ऐसे आदेश पारित किए जाते हैं और इसलिए इस बात का कोई कारण नहीं है कि भला उच्च न्यायालय भी ऐसा क्यों न करें। हम सम्मानपूर्वक इस बात का उल्लेख करना चाहेंगे कि इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश अंतिम आदेश होते हैं और उनके विरुद्ध कोई अपील नहीं की जा सकती। उच्चतम न्यायालय हमारे न्यायालयों की शृंखला में सर्वोच्च न्यायालय है। इसके अतिरिक्त, बिना कारण बताए दिए गए निर्णयों के बिना आदेश इस न्यायालय द्वारा भी बहुत ही कम मामलों में और आपवादिक परिस्थितियों में पारित किए जाते हैं। उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश संविधान के अनुच्छेद 136 तथा संबद्ध कानूनों के अन्य प्रवन्धों के अधीन अपीली अधिकारिता के अध्यधीन होते हैं। हमने यह मत व्यक्त करना इसलिए आवश्यक समझा कि ऐसी प्रणाली जो कि अत्यंत अवांछनीय है और जिससे कि कोई उपयोगी प्रयोजन सिद्ध नहीं होता है वर्तमान स्थिति में प्रारंभिक अवस्था से कहीं आगे न बढ़ जाए।

अपील मंजूर की गई।

भू०